मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता। दुनिया के मज़दूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है। दुनिया को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा।

RN 42233

नई सीरीज नम्बर 15 सितम्बर 1989 50 पैसे

तोप नहीं, मजदूरों को रोटी चाहिए !

तोप। ज्यादा तोप। बढ़िया तोप। पूँजीवादी इन्द्रधनुष का यह समवेत स्वर है। वैसे, दबे स्वर में अति-बौधिक पूँजीवादी बुद्धिजीवी हथियारों के ज्यादा खर्चीले होने का रोना भी रोते हैं।

समस्त देशभक्त, अति-आस्तिक से लेकर अति-नास्तिक तक, फौज के लिए बेहतरीन हथियार चाहते हैं। उनका नारा है : आधी रोटी खायेंगे, एटम बम बनायेंगे !

और, आजकल भारतीय पूँजीवादी गिरोहों की उठा-पटक में तोपें एक प्रमुख सवाल बनी हुई हैं। मजदूरों के खून-पसीने पर मोटे हो रहे पूंजी के इन नुमाइन्दों में से कोई भी यह नहीं कहता कि तोप नहीं चाहियें। तोपें तो उन सबको चाहियें ही चाहियें। तोपों के बारे में उनका झगड़ा तो इस समय कुर्सी के लिए झगड़े का हिस्सा है।

शासक पूंजीवादी गुट इस बात पर नाराज है कि कुर्सी के झगड़े में विरोधी पूँजीवादी गुटों ने तोपों तक को खुली बहस की चीज बना कर पूरे पूंजीवादी तन्त्र की पोल खुलने का खतरा पेश कर दिया है। विरोधी पूँजीवादी गुटों की दलील यह है कि कुर्सियाँ उन्हें दी जायें क्योंकि हथियारों जैसे मामले में भी दलाली खा कर शासक गुट ने पूंजीवादी तन्त्र के लौह स्तम्भ, फौज को कमजोर किया है। वे कहते हैं कि तोपों जैसी पवित्र चीजों को दलाली से परे रखा जाये। इस पर शासक गुट कहता है कि पवित्र गऊयें लोगों के लिए होती हैं, राजा के लिए तो कुछ भी करना जायज होता है। वैसे, जनता पार्टी की सरकार के समय जगुआर लड़ाकु जहाजों को खरीदने के पक्षधर मन्त्री और मिराज लड़ाकू जहाजों को खरीदने के पक्षधर मन्त्री के बीच कमीशन के चक्कर में ऐसी जुतम-पजार हुई थी कि एक मन्त्री-पुत्र की रंगरलियों की तस्वीरें दूसरे मन्त्री ने दिल्ली में बँटवाई थी।

साफ है कि अन्य धन्धों की ही तरह हजारों करोड़ के हथियारों वाले धन्धे में कमीशन खाना पूंजीवादी राजनीतिज्ञों के लिए आम बात है। आइये तोप और मजदूर के रिश्ते पर मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी नजरिये, मार्क्सवादी दृष्टिकोण से विचार करें।

लाखों वर्ष तक मानव समाज ऐसे सामाजिक गठनों से बना था जिनके सब सदस्यों में बराबरी थी। उन आदिम साम्यवादी गठनों में समूह का प्रत्येक सदस्य हथियारबन्द रहता था। आज से पाँच-सात हजार साल पहले बराबरी पर आधारित वे समूह टूटने लगे और मानव समाज ऐसे सामाजिक गठनों का जोड़ बना जो कि स्वयं में बँटे हुए थे। स्वामियों और दासों में बँटवारे के साथ बँटे हुये सामाजिक गठनों की शुरूआत हुई थी। दमन-शोषण और ऊँच-नीच वाली ऐसी समाज व्यवस्थायें तभी टिकाऊ हो सकती हैं जब प्रत्येक के हथियारबन्द होने को खत्म करके चन्द लोगों का हथियारों पर एकाधिकार कायम किया जाये। दुनिया-भर में जगह-जगह यही किया गया और भारत में तो चन्द लोगों के हथियारों पर एकाधिकार को उसी प्रकार धर्म का मुलम्मा चढ़ा दिया गया जैसा शास्त्र पर चन्द लोगों के एकाधिकार के सम्बन्ध में किया गया था। तो, यह है फौज का असली आधार।

बँटे हुए समाज में शोषितों-पीड़ितों को कन्ट्रोल में रखने के लिए फौज लुटेरों का अन्तिम औजार है। यूं लुटेरों की आपसी छीना-झपटी में भी फौज उनका औजार होती है और मेहनतकशों से फौज की असलियत छिपाने के लिये लुटेरे इस तथ्य का बेहद इस्तेमाल करते हैं। लुटेरों की आपसी लड़ाई में हारने वालों के प्रति विजेता की बर्बरता फौज की असल हकीकत पर परदा डालती है। भाटों-चारणों द्वारा गढ़े और गाये जाने वाले किस्से-कहानियाँ इन परदों पर परदे का काम करते हैं। इन वजहों से अक्सर मेहनतकश लोग अनजाने में अपने शोषकों के गीत गाते हैं।

आज से ढाई-तीन सौ साल पहले पूंजीवाद के आगमन के साथ राष्ट्र-देश के रूप में लुटेरी गिरोहबन्दियाँ नये रूप में संगठित हुई। पहले के लुटेरों की तरह ही पूँजीवादी लुटेरों के लिए फौज मजदूरों के खिलाफ उनका अन्तिम हथियार है। और पूँजीवादी लुटेरे देशभक्ति आदि की अफीम की आड़ में फौज की असलियत को छिपाने में खूब सफल हुए हैं। आज उन्होंने ऐसा माहौल बना दिया है कि आम लोग मानकर चलते हैं कि फौज तो देश की रक्षा के लिए है। फौज को दूसरे देशों के खिलाफ हथियार बताया जाता है। छिपा दी जाती है यह हकीकत कि देश के अन्दर शोषक और शोषित हैं। परदा डाल दिया जाता है इस तथ्य पर कि "देश के हित" का मतलब पूंजी के नुमाइन्दों का हित है। और इस प्रकार हर देश में पूंजी के नुमाइन्दों ने फ़ौज को पवित्र गऊ बना दिया है जिस पर उँगली उठाना महापाप है। पूंजी के नुमाइन्दे बचपन से घुट्टी में ही ऐसी शिक्षा देनी शुरू कर देते हैं। इसीलिए इस सदी के दो पूँजीवादी विश्वयुद्धों में ही सात-आठ करोड़ लोग "अपने-अपने" देश की फौज में भर्ती करके बलि के बकरे बनाये जा सके हैं। और पूंजीवादी काली का खप्पर है कि रक्त से भरता ही नहीं। पाताल की गहराई वाले इस खप्पर को तहस-नहस करना मजदूरों का काम है।

चूँकि मजदूर और पूँजी के बीच अटल शत्रुता का रिश्ता है इसलिए यह जरूरी है कि मजदूर अपने दुश्मन के अन्तिम और घातक हथियार को पहचानें। पूँजीवादी लुटेरों के लिए फौज एक-दूसरे के खिलाफ इस्तेमाल होने वाला हथियार बेशक है, पर यह फौज का असली आधार नहीं है। बुनियादी तौर पर हर देश की फौज वहाँ के मजदूरों के खिलाफ पूँजी के नुमाइन्दों का अन्तिम हथियार है। और मजदूरों की बगावतों के समय फौज की यह हकीकत बार-बार सामने आई है। इसलिये पूँजीवादी गुटों की बढ़िया और ज्यादा तोपों की आम माँग के खिलाफ मजदूरों की आवाज यह बनती है : तोप नहीं, हमें रोटी चाहिये !

ईस्ट इण्डिया कॉटन

मजदूरों ने यहाँ की मैनेजमेंट के दाल फ्राई लठैतों के शिकंजे को ढीला करना शुरू कर दिया है। जून में प्रिन्टिंग और प्रोसेसिंग प्लान्ट में एक्सीडैन्ट में एक मजदूर की मौत के बाद मजदूरों ने दस साल बाद मैनेजमेंट-दाल फ्राई गिरोह के खिलाफ एक जीत हासिल की थी। अगस्त में मजदूर कुछ और आगे बढ़े हैं।

12 अगस्त को यूनियन लीडरों ने पावरलूम पर गेट मीटिंग की। उसमें मजदूरों की ले-ऑफ और लीडरों को बिना काम किये 30 दिन की हाजरी मिलने के खिलाफ मजदूरों में से आवाज उठी। लीडर-मैनेज़मेंट गठजोड़ के विरुद्ध मजदूरों की इस टोका-टोकी से लीडर बौखला गये।

गेट मीटिंग में टोका-टोकी करने वाले एक मजदूर का 13 अगस्त को सुबह साढ़े छह बजे की शिफ्ट में गेट रोक दिया गया। ईस्ट इंडिया कॉटन में यह नियम-सा बन गया है कि जिन मजदूरों का गेट रोका जाता है उन्हें चार्जशीट आदि लिखित में कुछ नहीं दिया जाता। हकीकत यह है कि पूंजीवादी कानूनों को भी पूँजी के नुमाइन्दे ही आजकल जगह-जगह खुलेआम तोड़ते हैं। मजदूरों को इससे यह सीख लेनी चाहिए कि कानून-वानून के चक्कर में ज्यादा न पड़ें। वैसे भी, पूँजी के शासन के संचालन के लिए बने यह कानून मजदूरों के तो हैं नहीं।

लीडरों का विरोध करने वाले मजदूरों के खिलाफ़ ईस्ट इंडिया मैनेजमेंट कदम उठाती रही है इसलिये पावरलूम के वर्करों को इसकी शंका पहले से ही थी। लेकिन अब तक डर जाने, दब जाने वाले मजदूरों ने इस बार कदम उठाया, साथी वर्कर के गेट रोकने के खिलाफ नाइट शिफ्ट से छूटे मजदूर गेट पर रुक गये और अन्दर गये मजदूरों ने काम शुरू नहीं किया। घंटे-भर में मैनेजमेंट और लीडरों की भागदौड़ शुरू हो गई। वर्कर के गेट रोकने की जिम्मेदारी कोई नहीं ले रहा था और सब कह रहे थे कि मजदूर काम शुरू करें, सब ठीक हो जायेगा। मैनेजमेंट और लीडरों के आश्वासनों के बाद मजदूरों ने डेढ़ घंटे से रुके काम को शुरू कर दिया और नाइट शिफ्ट वाले वर्करों ने चेतावनी दी की अगर आश्वासन के मुताबिक वर्कर को ड्यूटी पर नहीं लिया तो वे रात को फिर कदम उठायेंगे। वर्कर को 13 को ही सुबह की शिफ्ट में ड्यूटी पर ले लिया गया।

पावरलूम के मजदूरों ने इस घटनाक्रम में काफी सूझ-बूझ का परिचय दिया है। हालात का सही जायजा लेते हुये उन्होंने आर-पार की लड़ाई नहीं लड़ी। मजदूरों ने यह नहीं कहा कि वर्कर को ड्यूटी पर लो तभी काम शुरू होगा। मजदूरों ने मैनेजमेंट को एक झटका दिया तथा नफे-नुकसान का हिसाब लगाने का उसे समय दिया। और मजदूर सफल हुये।

आमतौर पर रोजमर्रा के छोटे मसलों पर टकराव की स्थिति में भी आर-पार की लड़ाई का रास्ता मजदूर पकड़ते हैं। कुछ सिद्धान्त भी इस किस्म का बन चुका है कि हर संघर्ष को धकेल कर जितना हो सके बढ़ाओ। जब तक फैक्ट्री किसी मालिक की होती थी, यानि किसी एक का पैसा फैक्ट्री में लगा होता था तब तक यह राह आमतौर पर मजदूरों की ताकत बढ़ाती थी। फैक्ट्री मालिक, यानि पूँजीपति के खिलाफ मजदूर जितना जम कर लड़ते उतनी ही

हमारे लक्ष्य हैं--1. मौजूदा व्यवस्था को बदलने के लिए इसे समझने की कोशिशें करना और प्राप्त समझ को ज़्यादा से ज्यादा मजदूरों तक पहुँचाने के प्रयास करना। 2. पूंजीवाद को दफ़नाने के लिए जरूरी दुनिया के मजदूरों की एकता के लिए काम करना और इसके लिए आवश्यक विश्व कम्युनिस्ट पार्टी बनाने के काम में हाथ बँटाना। 3. भारत में मजदूरों का क्रान्तिकारी संगठन बनाने के लिए काम करना। 4. फरीदाबाद में मजदूर पक्ष को उभारने के लिए काम करना।

समझ, संगठन और संघर्ष की राह पर मजदूर आन्दोलन को आगे बढ़ाने के इच्छुक लोगों को तालमेल के लिए हमारा खुला निमन्त्रण है। बातचीत के लिए बेझिझक मिलें। टीका-टिप्पणी का स्वागत है--सब पत्रों के उत्तर देने के हम प्रयास करेंगे।

सम्पर्क- मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन० आई० टी० फरीदाबाद--121001

मजदूरों की जीतन की सम्भावना बढ़ती थी। हड़ताल को लम्बा खींचकर किसी पूँजीपति का भट्टा बैठाया जा सकता था। पर समय के साथ पूँजी के मालिकाने में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। आज आमतौर पर किसी भी फैक्ट्री में एक व्यक्ति या परिवार का ज्यादा पैसा नहीं लगा होता। सरकारी फैक्ट्रियों में तो यह बिलकुल साफ है ही, प्रायवेट में भी इस सम्बन्ध में क्वालिटी का फर्क नहीं है। आज मजदूरों को मालिक की बजाय मैनेजमेंट से मुकाबला करना होता है। फैक्ट्री में मैनेजमेंट के लोग ही पूँजी के नुमाइन्दे होते हैं और मन्त्री-गवरनर-डी सी गवनर डी सी एस पी-एस पी-जज-जनरल इनके संगी-साथी हैं।

चूँकि मैनेजमेंट में कर्त्ता-धर्त्ता बने लोगों का फैक्ट्री में अपना पैसा ज्यादा नहीं लगा होता, इसलिये ज्यादा समय काम बन्द रहने से उनकी सेहत पर ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। इन हालात में एक फैक्ट्री में आर-पार की लड़ाई की मजदूरों की कोशिशें आजकल आमतौर पर मजदूरों को नुकसान पहुँचाती हैं। आज के हालात में जब तक आम माहौल शान्त रहता है तब तक मजदूरों को मैनेजमेंटों के खिलाफ फैक्ट्रियों में छापामार लड़ाई लड़नी चाहिये, यानि एक-डेढ़ घन्टा कामबन्दी और स्लो डाउन जैसे संघर्ष मजदूरों को करते रहना चाहिये। अपने हितों के सवालों पर मजदूरों को मैनेजमेंटों को झटके देने चाहियें और मजदूरों की समस्या हल न होने पर अपने नफे-नुकसान का हिसाब लगाने को मैनेजमेंट को मजबूर करना चाहिये। इन छापामार लड़ाइयों के जरिये एक तरफ मजदूर अपने खिलाफ मैनेजमेंटों के हमलों का विरोध कर सकते है और साथ-ही-साथ उस समय के लिए अपनी ताकत भी बढ़ा सकते हैं जब आम माहौल गरम होगा और पूँजी के समस्त नुमाइन्दों से जम कर टक्कर लेने का समय मजदूरों के सामने होगा।

ईस्ट इंडिया के प्रिन्टिंग और प्रोसेसिंग प्लान्ट में भी लीडरों का विरोध करने के इल्जाम में मैनेजमेंट ने एक मजदूर का गेट रोका। इस पर वहाँ भी मजदूरों में गुस्सा खूब भड़का पर उन्होंने गाली-वाली देकर ही अपना गुबार निकाला। अपने साथी मजदूर के पक्ष में इन मजदूरों ने कोई कदम नहीं उठाया। उस वर्कर को चक्कर काटने पड़े।

और, ईस्ट इंडिया मैनेजमेंट ने डावर प्लान्ट से 400 परमानेन्ट वर्करों को हटा कर वहाँ ठेकेदारों के वर्करों से काम शुरू करवा दिया है। ठेकेदारी शुरू करवाने वाले दिन मैनेजमेंट ने पुलिस का प्रबन्ध किया था। वर्करों की तरफ से विरोध में आवाज का न उठना मजदूरों की कमजोरी ही दर्शाता है। रही सरकार की बात, एक तरफ तो यह ठेकेदारी बन्द करवाने की घोषणायें करती है और दूसरी तरफ नई-नई ठेकेदारियाँ शुरू करवाने के लिए पुलिस भेजती है।

एक पत्र

मजदूर आन्दोलन और तकनोलॉजी

"मजदूर आन्दोलन का काम पूँजीवादी व्यवस्था में इस या उस तकनोलॉजी का पक्ष लेना नहीं है।...[प्रश्न यह है कि] संघर्ष को मजबूत करने के लिये हमें क्या-क्या कदम उठाने चाहियें।" [फ म स, जुलाई ८५ अंक]

आटोमेशन और उसके प्रति मजदूरों के रुख से सम्बन्धित आपकी दलीलों से यह निष्कर्ष वाकई निकलता है लेकिन एक सामान्यीकरण के तौर पर यह उचित नहीं है।

किसी वजह से लेख यह आभास देता है कि मजदूर वर्ग आन्दोलन को तकनोलॉजी के प्रश्न की अनदेखी करनी चाहिये। और मेरे विचार से सामाजिक जीवन के किसी भी पहलू की अनदेखी करना ठीक नहीं है। इसके विपरीत, पूंजी के खिलाफ मजदूर वर्ग का संघर्ष तकनोलॉजी समेत विभिन्न क्षेत्रों में संघर्षों का योग होना चाहिये।

यह सच है कि तकनोलॉजी स्वयं में शोषक नहीं है बल्कि उत्पादन की किसी व्यवस्था में ही तकनोलॉजी ऐसी होती है। पर साथ ही यह भी सच है कि उत्पादन की कोई व्यवस्था (पूँजीवाद आज) तकनोलॉजी के किसी विशेष विकास को ही प्रेरणा देती है।

आज तकनोलॉजी समेत हमारे साधनों के उल्लेखनीय हिस्से उपभोग की ऐसी वस्तुओं और विनाश के ऐसे साधनों के उत्पादन में लगते है जो कि जीवनयापन के लिये व्यर्थ हैं, ऊर्जा तथा प्राकृतिक संसाधनों का अपव्यय है और पर्यावरण के लिये हानिकारक हैं। यह सब इसलिये है कि उत्पादों का विनिमय-मूल्य आज उनके उपयोग-मूल्य पर हावी है।

यह मजदूर आन्दोलन का काम है कि वह समाजवादी व्यवस्था के अनुरूप तकनोलॉजी का समर्थन व विकास करे। सच है कि तकनोलॉजी के ऐसे विकास में उत्पादन के पूंजीवादी सम्बन्ध बाधा बनेंगे, पर यही तो है जो इस नई तकनोलॉजी के लिये संघर्ष को पूंजी के खिलाफ संघर्ष का एक अंग बनायेगा।

ठोस समस्याओं के खिलाफ और ठोस लक्ष्यों के लिये ही कोई वास्तविक संघर्ष हो सकता है। — एक इंजीनियर

ठेकेदारों के मजदूरों की सफलतायें

मजदूरों में ठेकेदारों के वर्करों की पोजीशन सबसे कमजोर मानी जाती है। अक्सर यह मान लिया जाता है कि कैजुअल वर्करों की ही तरह ठेकेदारों के मजदूर संघर्ष नहीं कर सकते। इधर हमें मध्य प्रदेश से एक मित्र का खत मिला है जिसमें भिलाई स्टील प्लान्ट की दल्ली राजहरा स्थित लोहा-पत्थर खदानों में काम कर रहे ठेकेदारों के मजदूरों द्वारा लम्बे संघर्ष के बाद कुछ जीतें हासिल करने की जानकारी है।

भिलाई स्टील मैनेजमेंट और ठेकेदारों के मजदूरों के नुमाइन्दों के बीच हाल ही में एक एग्रीमेन्ट हुई है। सरकारी कारखाने की मैनेजमेंट सिद्धान्त में यह मान गई है कि ठेकेदारों के मजदूरों की भी ग्रेच्युटी (सर्विस) बनती है। मैनेजमेंट ने ठेकेदारों के वर्करों के लिये साल में 7 दिन की कैजुअल छुट्टियाँ और 5 दिन की त्योहारी छुट्टियाँ मानी हैं। भिलाई स्टील मैनेजमेंट यह भी मानी है कि मशीनीकरण से ठेकेदारों के मौजुदा मजदूरों को काम मिलना बन्द नहीं होगा, काम को बढ़ा कर इन मजदूरों को दूसरी जगहों पर काम दिया जायेगा।

पूंजी की जीवन-क्रिया मजदूरों पर नित नये हमलों को जन्म देती है। इन हमलों के आगे घुटने टेकने की बजाय मजदूरों द्वारा संगठित हो कर इनका मुकाबला करना जरूरी है। हाँ, हमें राह वह पकड़नी चाहिये जिसपर आगे बढ़ते जाने के साथ मजदूरों की ताकत बढ़ती जाये।

फरीदाबाद के कैजुअल वर्करों और ठेकेदारों के मजदूरों को भिलाई की खदानों के ठेकेदारों के वर्करों से सीख लेनी चाहिये।

३० अगस्त का भारत बन्द
मजदूरों के लिये दोनों तरफ मौत का कुँआ

बन्द का समर्थन करें या इसका विरोध करें? यह सवाल ही मजदूरों के लिये कितना बेतुका है यह चीज फरीदाबाद में साफ-साफ दिखाई दी। हरियाणा में इस समय जनता दल सरकार है इसलिये यह बात यहाँ स्पष्ट थी। देवीलाल सरकार की कारगुजारियों का फरीदाबाद के मजदूरों को प्रत्यक्ष अनुभव है इसलिये बन्द-समर्थक पार्टियों की ट्रेड यूनियनों की बन्द के समर्थन में दलीलें यहाँ मजदूरों के गले उतरने वाली चीजें नहीं थीं। और हरियाणा में सरकारी तन्त्र द्वारा खुलेआम बन्द-समर्थन ने साफ-साफ दिखा दिया कि यह बन्द पूंजीवादी गुटों का आपसी संघर्ष है। यूनियनों और मैनेजमेंटों ने मिलकर ज्यादातर फैक्ट्रियों में 30 अगस्त को वीकली रैस्ट में बदल दिया। और कई मैनेजमेंटों ने बन्द को पुरजोर समर्थन दे कर मन्द बुद्धि वाले मजदूरों को भी इस "क्रान्तिकारी" मजाक पर हँसा दिया। हाँ, फूं-फां में मजे लेने वाले किसानों के कुछ छोकरों और संघर्ष का सर्टीफिकेट लेकर हरियाणा सरकार से कुछ पा जाने की उम्मीद वालों के लिये बन्द एक बढ़िया मौका था। बँगाल, तमिलनाडु, असम और केरल में लगता है कि इससे मिलती-जुलती स्थिति रही होगी।

जिन प्रान्तों में कांग्रेस की सरकार है वहाँ मजदूरों के सामने यह मामला साफ-साफ ढँग से नहीं आया होगा। कांग्रेसी राज्य सरकारों द्वारा बन्द का विरोध और कई फैक्ट्रियों की मैनेजमेंटों द्वारा भी उन राज्यों में बन्द के विरोध ने मजदूरों को दुश्मन के दुश्मन की तरफदारी के चक्कर में डाल कर बन्द समर्थकों की तरफ झुकाया होगा।

फिर भी, यह तो करीब-करीब सब जगह साफ था कि यह बन्द भी कुर्सी की लड़ाई में ही एक कदम है। जिन लोगों का इस व्यवस्था की कुर्सी से हित जुड़ा है या जो लोग यह समझते हैं कि कुर्सी पर फलाँ व्यक्ति का होना ठीक है, वे लोग ही बन्द के समर्थकों और विरोधियों में बँटे थे। और चूंकि कुर्सी पर बैठने वालों को बदलने से मजदूरों की स्थिति नहीं बदलेगी, इस लिये मजदूरों द्वारा अपने हित में इस बन्द का समर्थन करने या विरोध करने का कोई भौतिक आधार नहीं था।

यहाँ भारत बन्द के सवाल से जुड़ी पूंजीवादी राजनीति की कुछ घटनाओं पर गौर करना भविष्य के लिहाज से मजदूरों के लिये फायदेमन्द हो सकता है। चालीसेक साल से दुनिया-भर में पूंजीवादी राजनीति दो धुरियों के इर्द-गिर्द घूम रही है। एक धुरी "अमरीकी" पूंजी की है और दूसरी धुरी "रूसी" पूंजी है। "भारतीय" पूंजी मोटे तौर पर रूसी धड़े में रही है। इधर दुनिया की पूंजीवादी शक्तियों की स्थिति में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। कुछ समय से रूसी धड़े की कमजोरी खुलकर सामने आ गई है। पूंजीवादी व्यवस्था के बढ़ते संकट ने रूसी धड़े के समाजवादी/कम्युनिस्ट मुखौटे को नोच कर उसकी राज्य-पूँजीवादी हकीकत को सामने ला दिया है। इस पर मजदूरों को गुमराह करने की रूसी धड़े की क्षमता इधर काफी कम हो गई। रूसी धड़े की कमजोरी का फायदा उठाकर अमरीकी धड़े ने उसके पोलैंड जैसे इलाके में घुसपैठ कर ली है।

पूँजीवादी दुनिया की इस स्थिति ने भारत में पूँजीवादी राजनीति पर भी असर डाला है। लगता है कि अमरीकी धड़े ने भारत को अपने गुट में मिलाने की मुहिम तेज कर दी है। यहाँ के पूँजीवादी धरातल पर आलटरनेटिव प्रधान-मंत्री के रूप में वी॰पी॰ सिंह का उभरना उनके इस काम को सरल बनाता लगता है। रूस सरकार बेशक खुल कर राजीव सरकार का समर्थन कर रही है पर रूस पक्षधर सी पी आई-सी पी एम तक पर रूसी सरकार की सलाह का अब असर कम पड़ता दीखता है। रूस सरकार को आजकल अपने शासन क्षेत्र में ही लोगों को कन्ट्रोल में रखने में दिक्कतें आ रही हैं इसलिए यह स्वाभाविक भी है। और आज हालात यह है कि सी पी आई-सी पी एम के जो नेता अमरीकी धड़े से खतरे को भाँप रहे हैं वे भी अपने खुद के दाव-पेच में इस कदर उलझ गए हैं कि बेमन से ही सही पर वे अपनी समझ के खिलाफ कदम उठा रहे हैं। पूँजीवादी राजनीति में गुटों के कभी भी इधर-उधर हो जाने की सम्भावना रहती है। और पूँजीवादी चुनावी राजनीति क्या गुल खिलायेगी यह अभी नहीं कहा जा सकता। फिर भी, एक बात जो साफ नजर आती है वह यह है कि लोगों को भरमाने के लिये थोथी घोषणाओं और लाठी के जोर पर खुली लूटपाट का मेल अब पूँजीवादी राजनीति में निर्लज्जता से होगा।

इन हालात में राजीव सरकार के खिलाफ गुस्से को वी॰ पी॰ सिंह को समर्थन देने में व्यक्त करना और देवीलाल गिरोह के खिलाफ भड़ास को कांग्रेस का समर्थन करके निकालना मजदूरों की बरबादी की राह है। राजीव और वी॰ पी॰ सिंह में क्वालिटी का भेद नहीं है, दोनों गिरोहबन्दियाँ मजदूरों के लिये मौत का कुँआ हैं।

राजीवों और देवीलालों के झाँसों में न आना और मजदूरों के तौर पर अलग से संगठित होने के लिए कदम उठाना ही मजदूरों के लिए आगे बढ़ने की राह है।

स्वत्वाधिकारी व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित व अशोक कम्पोजिंग एजेन्सी द्वारा, मानस प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-31 में मुद्रित।